नरेंद्र मोदी: देश ने मान लिया दिल्ली कब मानेगी

जमीन की जंग में नरेंद्र मोदी उलझ से गए लगते हैं। इसने पूरे विपक्ष को एकजुट तो किया ही है, साथ ही यह छवि भी प्रक्षेपित कर दी है कि सरकार को किसानों की चिंता नहीं है। अध्यादेशी आतुरता ने सरकार को दर्द के उस चौराहे पर खड़ा कर दिया है, जहां से आगे जाने और पीछे जाने दोनों में खतरा है। सरकार चलाना इसीलिए संख्या बल से ज्यादा सावधानी का खेल है। जमीन को लेकर कौन क्या कहता रहा है, इसे छोड़कर वे सब सरकार के खिलाफ एकजुट हैं, जिन्होंने यूपीए के भूमिअधिग्रहण कानून पर ही सवाल उठाए थे। यह बात बताती है कि सारा कुछ इतना सरल और साधारण नहीं है, जैसा समझा जा रहा है।

दिल्ली में पराए हैं वे:

साधारण सी राजनीतिक समझ रखने वाला भी जान रहा है कि गुजरात से दिल्ली की यात्रा नरेंद्र मोदी ने, जनता के अपार प्रेम के चलते पूरी जरूर कर ली है पर लुटियंस की दिल्ली में अभी वे पराए ही हैं। टीवी चैनलों के बहसबाजों, अखबारों के विमर्शकारों, दिल्ली में बसने वाले बुद्धिवादियों के लिए नरेंद्र मोदी आज भी स्वीकार्य कहां हैं ? मोदी आज भी इस कथित बौद्धिक समाज द्वारा स्वीकारे नहीं जा सके हैं। इस छोटे से वर्ग का विमर्श सीमित, आत्मकेंद्रित, दिल्लीकेंद्रित और भारतविरोधी है। इसे न तो वे छिपाते हैं, न ही उन्हें एक बड़े राजनीतिक परिवर्तन के बाद अपने विमर्शों में संशोधन की जरूरत लगती है। नरेंद्र मोदी जिस विचार परिवार के नायक हैं, वह विचार परिवार ही इस वर्ग के लिए स्वीकार्य नहीं है बल्कि उसकी निंदा के आधार पर ही इन सबकी राजनीति बल पाती है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और उसके विचार परिवार की यात्रा ने जो लोकस्वीकृति प्राप्त की है वह चौंकाती जरूर है, किंतु हमारे बुद्धिजीवी उस संदेश को पढ़कर खुद में बदलाव लाने के बजाए मोदी की सरकार को नाहक सवालों पर घेरने में लगे हैं। शायद इसीलिए सरकार बनते ही मोदी पर जो हमले शुरू हुए तो मोदी ने इस खेल को समझकर ही कहा था-" जिन्होंने साठ साल तक कुछ नहीं किया वे हमसे पांच महीने का हिसाब मांग रहे हैं।"

भारतद्वेषी बुद्धिजीवियों के निशाने पर:

मोदी का संकट लुटियंस की दिल्ली में बसने वाले भारतद्वेषी बुद्धिजीवी तो हैं ही, उनके अपने परिवार में भी संकट कम नहीं हैं। दिल्ली में आए मोदी की स्वीकार्यता स्वयं दिल्ली के भाजपाई दिग्गजों में भी नहीं थी। परिवार की एक लंबी महाभारत के बाद वे दिल्ली की गद्दी पर आसीन तो हो गए पर परिणाम देने की चुनौती अभी भी शेष है। आज भी दिल्ली के टीवी चैनलों का विमर्श क्या है, वही निरंजन ज्योति या हिंदू महासभा के कुछ नेताओं के बयान। यह आश्चर्यजनक है कि एक ऐसा संगठन हिंदू महासभा, जिसकी कोई आवाज नहीं है। उसका कोई आधार शेष हो, इसकी जानकारी नहीं। किंतु किस आधार पर हिंदू महासभा को बीजेपी से जोड़कर मोदी से जवाब मांगे जाते हैं, यह समझना मुश्किल है। इतिहास में भी हिंदू महासभा और आरएसएस के रास्ते अलग-अलग रहे हैं। साध्वी निरंजन ज्योति के बारे में अशोक सिंहल कह चुके हैं वे विश्व हिंदू परिषद से संबंधित नहीं हैं। आखिर क्यों देश के

प्रधानमंत्री को इन सबके बयानों के कठघरे में खड़ा किया जाता है? अपने चुनाव अभियान से आज तक नरेंद्र मोदी ने कोई कटु बात किसी भी समुदाय के बारे में नहीं कही है। वे आरएसएस से जुड़े हैं, इसे उन्होंने नहीं छिपाया है। स्वयं संघ के नेतृत्व ने ज्यादा बच्चों के बयान पर आगे आकर यह कहा कि "हमारी माताएं बच्चा पैदा करने की मशीन नहीं हैं। वे बच्चों के बारे में स्वयं निर्णय करेंगीं।"

संघ परिवार का राजनीतिक विवेक है कसौटी पर:

जाहिर तौर पर नरेंद्र मोदी को विफल करने के लिए एक बड़ा कुनबा लगा हुआ है। जिसमें राजनीतिक दलों के अलावा, प्रशासन के आला अफसर, वैचारिक दिवालिएपन के शिकार बुद्धिजीवी, मीडिया के लोग भी शामिल हैं। यह एक सरकार का बदलना मात्र नहीं है। एक राजनीतिक संस्कृति का बदलाव भी है। देश की बेलगाम नौकरशाही यह स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। वे मोदी को सफल होने देंगे इसमें संदेह है। सरकार की प्रशासनिक मिशनरी पर किस मन और मिजाज के लोग हैं, कहने की आवश्यक्ता नहीं है। मोदी उन्हें कस रहे हैं किंतु वे चपल-चालाक लोग हैं, जिन्होंने मनमोहन सिंह जैसे पढ़े-लिखे आदमी का सत्यानाश कर दिया। 10-जनपथ और प्रधानमंत्री निवास की जंग में देश ने अपने इतिहास के सबसे बुरे दिन देखे, किंतु नौकरशाही मस्त रही।

आज वही नौकरशाही नरेंद्र मोदी के रास्ते में इतिहास का सबसे बेहतर प्रधानमंत्री हो सकने की संभावना में बाधक है। मोदी के आलोचक सड़कों पर उतर आए हैं और उनके समर्थक बिना किसी गलती के खुद को अपराधी समझने की मनोभूमिका में आ गए हैं। इस अवसाद को हटाना भाजपा संगठन की जिम्मेदारी है। राजनीतिक क्षेत्र में बदलाव के लिए लोग बैचेन हैं। बहुत उम्मीदों से वे नरेंद्र मोदी को एक असंभव सी दिखने वाली जीत दिला चुके हैं, किंतु अब डिलेवरी का वक्त है। इतिहास नरेंद्र मोदी, भाजपा, आरएसएस सबसे हिसाब मांगेगा। यह नहीं चलेगा कि कड़वा-कड़वा थू और मीठा-मीठा गप। इसलिए संघ परिवार का राजनीतिक विवेक भी कसौटी पर है। उन सबकी पहली जिम्मेदारी सरकार को हमलों से बचाने की है। छवि को बनाए रखने की है और अपनी ओर से ऐसा कोई काम न करने की है, जिससे सरकार की गरिमा को ठेस लगे। संघ परिवार और भाजपा में बेहतर समन्वय के लिए अभी और प्रयासों की जरूरत है। प्रधानमंत्री और उनकी सरकार पर भरोसा करते हुए उसकी निगहबानी की जरूरत है। भारत जैसे देश में जहां पिछले तीन दशकों से मिलीजुली सरकारों के प्रयोग हो रहे हैं, वहां पूरे बहुमत के साथ सत्ता में आना एक उपलब्धि से ज्यादा जिम्मेदारी है।

नरेंद्र मोदी इतिहास के इस क्षण में अपनी जिम्मेदारियों से भाग नहीं सकते। वे संवाद कुशल हैं। संवाद के माध्यम से उन्होंने एक गांव बड़नगर से दिल्ली तक की यात्रा तय की है। अब उनके सामने कुछ कर दिखाने का समय है। उन्हें बताना होगा कि जनता ने अगर उन पर भरोसा किया है तो यह गलत नहीं है। उन्हें अपने विरोधियों, आलोचकों को गलत साबित करना होगा। क्योंकि अगर उनके आलोचक गलत साबित होते हैं, तो देश जीतता हुआ दिखता है। उनके आलोचकों की पराजय दरअसल भारत की जीत होगी। भारत ने भारत की तरह देखना और सोचना शुरू कर दिया है। पर ये अभी पहला मुबारक कदम है नरेंद्र मोदी को अभी इस देश के सपनों में रंग भरने हैं। उम्मीदों से खाली देश में फिर से उम्मीदों का ज्वार भरना है। चुनावों के बाद नए चुनाव आते हैं, इनमें हार या जीत होती है। किंतु देश का नेता उम्मीदों और सपनों की तरफ जनप्रवाह प्रेरित करता है। मोदी में वह शक्ति है कि वे यह कर सकते हैं। नीतियों के तल पर, डिलेवरी के मोर्चे पर अभी बहुत कुछ होना शेष है। एक बड़ा हिंदुस्तान अभी भी

अभावों से घिरा है। असुरक्षा से घिरा है। रोजाना रोटी के संघर्षों में लगा है। उसकी उम्मीदें हर नई सरकार के साथ उगती हैं और फिर कुम्हला जाती हैं। सत्ता के आतंक और सत्ता के दंभ के किस्से इस देश ने साठ सालों में बहुत देखे-सुने हैं। गुस्से में आकर सरकारें बदली हैं। मोदी ने भी इस गुस्से का लाभ लेकर अच्छे दिनों का वादा कर राजसत्ता पाई है। उन्हें हर पल यह सोचना होगा कि वे दिल्ली में आकर दिल्ली वालों सरीखे तो नहीं हो जाएंगे। उनके विरोध में आ रहे तर्क बताते हैं कि नरेंद्र मोदी बदले नहीं हैं। वे कुछ करेंगे यह भरोसा भी है। किंतु सबसे जरूरी यह है कि उनके अपने तो उन पर भरोसा रखें और थोड़ा धीरज भी धरें।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक हैं)

.